सिविल निगरानी

न्यायमूर्तिगण डी. के. महाजन और ए. डी. कोशल के समक्ष

तारा चंद और अन्य, ---- याचिकाकर्ता

बनाम

प्रकाश चंद और अन्य, ---- उत्तरदाता

सिविल निगरानी संख्या 61 सन 1967

20 नवंबर, 1969

परिसीमा अधिनियम (XXXVI सन 1963*) - धारा* 2(जे), 4 *और* 12(2) *- अवकाश के दिन समाप्त होने वाली अपील दायर करने की सीमा - अगले दिन अपील दायर करने के खिलाफ अपील की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन - अपील उसी दिन दायर की गई जब प्रति प्रदान की गई थी - ऐसी प्रति प्राप्त करने में लगने वाला समय - क्या अपील के लिए सीमा की गणना अवधि के लिए बाहर रखा गया है।*

यह अभिनिर्णीत किया गया कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 12 का प्रभाव किसी विशेष कार्यवाही के लिए अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि का विस्तार करना है, धारा 4 का ऐसा कोई प्रभाव नहीं है और केवल संबंधित पक्ष को न्यायालय के फिर से खुलने पर अपना मुकदमा, अपील या आवेदन दायर करने में सक्षम बनाता है, जैसा भी मामला हो, अधिनियम की धारा 2 के खंड में परिभाषित इन अभिव्यक्तियों के अर्थ के भीतर "सीमा की अवधि" या "निर्धारित अवधि" का विस्तार किए बिना। किसी विशेष मामले में "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने के लिए, इसलिए, जो कुछ भी किया जाना है, वह अनुसूची में दी गई सीमा की अवधि प्राप्त करना है और इसमें किसी भी अवधि या अवधि को जोड़ना है जिसे धारा 12 या अधिनियम के भाग III की किसी अन्य धारा के तहत बाहर रखा जा सकता है जो लागू हो सकती है। "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने के बाद, यह देखा जाना चाहिए कि क्या मुकदमा, अपील या आवेदन उस अवधि के भीतर या इसकी समाप्ति के बाद स्थापित, पसंद या किया जाता है। यदि यह उस अवधि के भीतर किया जाता है, तो मामले का अंत हो जाता है और मुकदमा, अपील या आवेदन को समय के भीतर दायर किया जाना चाहिए। यदि, दूसरी ओर, उस अवधि की समाप्ति के बाद मुकदमा, अपील या आवेदन को खारिज कर दिया जाता है, तो न्यायालय अधिनियम की धारा 3 के प्रावधानों के अनुसरण में इसे खारिज नहीं करेगा, यदि मामला धारा 4 के प्रावधानों द्वारा कवर किया गया है, हालांकि, प्रावधान सीमा की अवधि का विस्तार नहीं करते हैं। इस प्रकार, यदि अपील दायर करने की सीमा अवकाश के दिन समाप्त हो जाती है और अपील के तहत आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन अगले दिन किया जाता है, और अपील उसी दिन दायर की जाती है जिस दिन प्रति तैयार होती है और आपूर्ति की जाती है, तो प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में लगने वाले समय को सीमा की अवधि की गणना के लिए बाहर रखा जाना चाहिए। (पैरा 5)

माननीय न्यायमूर्ति प्रेम चंद पंडित द्वारा 6 मार्च, 1969 को कानून के एक महत्वपूर्ण प्रश्न के निर्णय के लिए एक खंडपीठ को मामला भेजा गया। माननीय न्यायमूर्ति डी.के. महाजन और माननीय न्यायमूर्ति ए.डी. कोशल की खंडपीठ ने अंततः 20 नवंबर, 1969 को मामले का फैसला किया।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत *रोहतक के अतिरिक्त जिला न्यायाधीश श्री बनवारी लाल सिंघल* के दिनांक 21 नवम्बर, 1966 के आदेश में निगरानी के लिए याचिका दायर की गई है, जिसमें श्री डी.आर. सैनी, वरिष्ठ उप-न्यायाधीश के *आदेश* दिनांकित 16 जनवरी, 1965 *की पुष्टि कर आपत्तियों को खारिज कर दिया गया हैं।*

राम रंग, अधिवक्ता, याचिकाकर्ताओं की ओर से ।

एन.सी. जैन, अधिवक्ता, प्रतिवादियों की और से।

निर्णय

कोशाल, जे। यह निगरानी याचिका परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 और 12 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की व्याख्या से संबंधित एक प्रश्न उठाती है।

2) तारा चंद और अन्य, हमारे समक्ष याचिकाकर्ता, इनसॉल्वेंट्स हैं जिनकी संपत्ति की बिक्री के खिलाफ आपत्तियों को 16 जनवरी, 1965 को रोहतक के इनसॉल्वेंसी न्यायलय के विद्वान न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था। उस आदेश के विरुद्ध अपील दायर करने के लिए अधिनियम की अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि 30 दिन थी, यह 15 फरवरी, 1965 को समाप्त हो गई, जो एक राजपत्रित अवकाश था। याचिकाकर्ताओं ने 16 फरवरी, 1965 को इनसॉल्वेंसी न्यायलय के आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए एक आवेदन किया। इसकी प्रति तैयार थी और 1 जून, 1965 को याचिकाकर्ताओं को दी गई थी, और उसी दिन याचिकाकर्ताओं ने रोहतक के जिला न्यायालय के समक्ष उक्त आदेश के खिलाफ अपील दायर की थी। अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, बनवारी लाई सिंघल ने पाया कि याचिकाकर्ता 106 दिनों की अवधि के परिसीमन करने के हकदार थे, जो उन्होंने अपील के लिए अधिनियम की अनुसूची द्वारा निर्धारित 30 दिनों की सीमा की अवधि की गणना करने में अपील की गई आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में खर्च की थी। उनके अनुसार, हालांकि, अपील समयबद्ध थी क्योंकि याचिकाकर्ताओं द्वारा लाभ उठाने के लिए 106 दिनों की कुल अवधि 31 मई, 1965 को समाप्त हो गई थी। यह अपील खारिज करने के आदेश के खिलाफ है कि याचिकाकर्ता इस न्यायालय में निगरानी के लिए आए हैं।

3) यह निगरानी याचिका पहली बार पी. सी. पंडित के समक्ष सुनवाई के लिए आई, जिन्होंने कहा कि अपीलीय न्यायालय की गणना त्रुटिपूर्ण थी, 106 दिनों की उक्त अवधि 31 मई, 1965 को समाप्त नहीं हुई थी, बल्कि 1 जून, 1965 को समाप्त हुई थी, जिस तारीख को अपील दायर की गई थी। हालांकि, प्रतिवादियों की ओर से उनके समक्ष यह आग्रह किया गया था कि याचिकाकर्ता उस सीमा की अवधि की गणना करने के लिए 106 दिनों की अवधि को बाहर करने के हकदार नहीं थे, जिसके भीतर अपील दायर की जा सकती थी क्योंकि उन्होंने अधिनियम की अनुसूची में निर्धारित 30 दिनों की अवधि के भीतर अपील की गई आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन नहीं किया था। दायर। दूसरी ओर, याचिकाकर्ताओं के वकील ने न्यायमूर्ति पंडित के समक्ष तर्क दिया कि अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के तहत अपील दायर करने की सीमा की अवधि 16 फरवरी, 1965 तक बढ़ा दी गई थी और इसलिए, इनसॉल्वेंसी न्यायलय

के आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन सीमा के भीतर किया गया था। पंडित ने पाया कि इस मुद्दे पर न्यायिक राय में भिन्नता थी और उनका विचार था कि इस पर एक बड़ी पीठ द्वारा विचार किया जाना चाहिए। इस तरह मामले को निर्णय के लिए हमारे समक्ष रखा गया है।

4) पंडित, जे. के समक्ष उठाए गए विवाद हमें संबोधित तर्कों के दौरान भी आगे बढ़ाए गए हैं और यदि अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान यहां निर्धारित किए जाते हैं तो इससे संबंधित बिंदु पर विचार करने में सुविधा होगी:

"2. इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ अन्यथा आवश्यक न हो,

* * * *

* * * *

(j) 'परिसीमा की अवधि' से अनुसूची द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन के लिए निर्धारित सीमा की अवधि अभिप्रेत है और 'निर्धारित अवधि' का अर्थ है इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार परिकलित परिसीमा की अवधि।

* * * *

* * * *

3. (1) धारा 4 से 24 (समावेशी) में निहित प्रावधानों के अधीन रहते हुए, निर्धारित अवधि के बाद स्थापित किए गए प्रत्येक वाद, पसंदीदा अपील और किए गए आवेदन को खारिज कर दिया जाएगा, हालांकि बचाव के रूप में सीमा निर्धारित नहीं की गई है।

* * *

* * *

4. जहां किसी भी मुकदमे, अपील या आवेदन के लिए निर्धारित अवधि उस दिन समाप्त हो जाती है जब अदालत बंद हो जाती है, तो मुकदमा, अपील या आवेदन उस दिन स्थापित, पसंद या किया जा सकता है जिस दिन अदालत फिर से खुलती है।

स्पष्टीकरण--किसी न्यायालय को इस धारा के अर्थ के भीतर किसी भी दिन बंद माना जाएगा, यदि वह अपने सामान्य कार्य घंटों के किसी भी भाग के दौरान उस दिन बंद रहता है।

12. (1) किसी वाद, अपील या आवेदन के लिए सीमा की अवधि की गणना करते समय, जिस दिन से ऐसी अवधि की गणना की जानी है, उसे बाहर रखा जाएगा।

(2) अपील करने या संशोधन के लिए या निर्णय की समीक्षा के लिए अनुमति के लिए एक आवेदन के लिए सीमा की अवधि की गणना करते समय, जिस दिन निर्णय सुनाया गया था और डिक्री, सजा या आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय को शामिल नहीं किया जाएगा।

(3) जहां किसी डिक्री या आदेश के खिलाफ अपील की जाती है या संशोधित या समीक्षा करने की मांग की जाती है, या जहां किसी डिक्री या आदेश से अपील करने की अनुमति के लिए आवेदन किया जाता है, तो उस निर्णय की प्रति प्राप्त करने

के लिए आवश्यक समय भी बाहर रखा जाएगा, जिस पर डिक्री या आदेश की स्थापना की गई है।

(4) किसी पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन की सीमा की अवधि की गणना करते समय, पुरस्कार की एक प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय को बाहर रखा जाएगा।

स्पष्टीकरण- इस धारा के तहत गणना में किसी डिक्री या आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय, उसकी प्रति के लिए आवेदन करने से पहले डिक्री या आदेश तैयार करने में अदालत द्वारा लिए गए किसी भी समय को बाहर नहीं रखा जाएगा।

यहां यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि धारा 3 और 4 अधिनियम के भाग II में होती हैं जिसका शीर्षक "मुकदमों, अपीलों और आवेदनों की सीमा" है, जबकि धारा 12 से 24 अधिनियम के भाग III का गठन करती है जिसका शीर्षक है "परिसीमा की अवधि की गणना"।

5) ऊपर उद्धृत प्रावधानों को पढ़ने से पता चलता है कि जबकि धारा 12 का प्रभाव किसी विशेष कार्यवाही के लिए अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि को बढ़ाना है, धारा 4 का ऐसा कोई प्रभाव नहीं है और केवल संबंधित पक्ष को अपना मुकदमा, अपील या आवेदन दायर करने में सक्षम बनाता है, जैसा भी मामला हो, अधिनियम की धारा 2 के खंड (j) में परिभाषित इन अभिव्यक्तियों के अर्थ के भीतर "सीमा की अवधि" या "निर्धारित अवधि" का विस्तार किए बिना, न्यायालय के फिर से खुलने पर। किसी विशेष मामले में "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने के लिए, इसलिए, जो कुछ भी किया जाना है, वह अनुसूची में दी गई सीमा की अवधि प्राप्त करना है और इसमें किसी भी अवधि या अवधि को जोड़ना है जिसे धारा 12 या अधिनियम के भाग III की किसी अन्य धारा के तहत बाहर रखा जा सकता है, जो वह लागू हो। 'निर्धारित अवधि' तय होने के बाद यह देखा जाना चाहिए कि क्या मुकदमा, अपील या आवेदन उस अवधि के भीतर या उसकी समाप्ति के बाद स्थापित, पसंद या किया गया था। यदि यह उस अवधि के भीतर किया गया था, तो मामले का अंत हो जाता है और मुकदमा, अपील या आवेदन समय के भीतर दायर किया जाना चाहिए। यदि, दूसरी ओर, मुकदमा, अपील या आवेदन उस अवधि की समाप्ति के बाद दायर किया गया था, तो न्यायालय अधिनियम की धारा 3 के प्रावधानों के अनुसरण में इसे खारिज नहीं करेगा, यदि मामला धारा 4 के प्रावधानों द्वारा कवर किया गया है, हालांकि, प्रावधान, जैसा कि पहले ही कहा गया है, सीमा की अवधि का विस्तार नहीं करता है।

6) यदि मामले को उपरोक्त चर्चा के आलोक में देखा जाता है, तो रोहतक में जिला न्यायालय में प्रस्तुत अपील को समय के भीतर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इस बात से इनकार नहीं किया जाता है कि नकल विभाग ने याचिकाकर्ताओं को दिवाला न्यायाधीश के आदेश की प्रति प्रदान करने में 106 दिनों से कम समय नहीं लिया और यदि अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) के प्रावधानों के तहत 106 दिनों की उस अवधि को बाहर रखा जाता है, तो अपील समय के भीतर होगी। हालांकि, प्रतिवादियों की ओर से यह तर्क दिया गया है कि 106 दिनों की उस अवधि को इस कारण से बाहर नहीं रखा जा सकता है कि दिवाला न्यायाधीश के आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन अपील के लिए अधिनियम की अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद किया गया था। इस

संबंध में *भिवानी क्लॉथ मिल्स, बनाम परमेशरी दोस* और अन्य[1], *अवसारला कावमराजू पंतुलु और एक अन्य* बनाम *बल्ला सरम्मा*[2], *सी. राघवेंद्र राव और अन्य वासवम्बा।*[3], *पुरी नगर पालिका के नगर पार्षद बनाम मधुसूदन दास महापात्र*[4], और *मुकट बिहारीलाल अग्रवाल वकील* बनाम *अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट (कार्यकारी) और अन्य*[5],में विश्वास किया गया है। इन सभी निर्णयों में यह देखा गया कि जब निर्णय की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन या अपील की गई डिक्री सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद की जाती है, तो अपीलकर्ता "निर्धारित अवधि" की गणना के लिए अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) के तहत कॉपी की आपूर्ति के लिए नकल विभाग द्वारा ली गई अवधि को बाहर करने का हकदार नहीं है। हालांकि, ये मामले वास्तव में उत्तरदाताओं के लिए कोई मदद नहीं करते हैं क्योंकि इसमें की गई टिप्पणियों को इसमें निपटाए गए विशेष तथ्यों के संबंध में लिया जाना चाहिए, न कि हाथ में प्रकार के मामले के लिए, जिनके तथ्य, हमारी राय में, अलग-अलग हैं। ये सभी कथित तौर पर *मकबुल अहमद और अन्य* बनाम *ओंकार प्रताप नारायण सिंह और अन्य*[6], का अनुसरण करते थे, जिसमें निर्णय के लिए उठने वाले प्रश्नों में से एक यह था कि क्या लंबी छुट्टी की अवधि, जिसके दौरान न्यायालय बंद है, को "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने के लिए बाहर रखा जा सकता है यदि आवेदन करने के लिए अनुसूची में दी गई सीमा की अवधि उस अवकाश के भीतर समाप्त हो जाती है। अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के संदर्भ में प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देते हुए लॉर्ड टॉमलिन ने कहा:

"दूसरी अवधि लंबी छुट्टी की अवधि है। उस मामले के संबंध में अपीलकर्ता अपने लॉर्डशिप को एक ऐसी स्थिति में प्रतीत होते हैं जो एक दुविधा की प्रकृति में है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि धारा 4 और धारा14 के बीच फॉर्म में एक चिह्नित अंतर है। धारा 4 में नियोजित भाषा इंगित करती है कि इसका निर्धारित अवधि की गणना से कोई लेना-देना नहीं है। धारा में प्रावधान है कि, जहां अवधि उस दिन समाप्त हो जाती है जब न्यायालय बंद होता है, उस तथ्य के बावजूद, आवेदन उस दिन किया जा सकता है जिस दिन न्यायालय फिर से खुलता है; ताकि अनुभाग में ऐसा कुछ भी न हो जो निर्धारित अवधि की लंबाई को बदल दे; जबकि अधिनियम की धारा 14 और इसी तरह की अन्य धाराओं में, निर्देश 'किसी भी आवेदन के लिए निर्धारित सीमा की अवधि की गणना में' शब्दों से शुरू होता है, कुछ अवधियों को बाहर रखा जाएगा। इसलिए, उनके लॉर्डशिप को ऐसा लगता है कि, जहां धारा 14 के तहत कुछ अवधियों को बाहर करने का आधार है, यह पता लगाने के लिए कि निर्धारित अवधि की समाप्ति की तारीख क्या है, सीमा के माध्यम से परिचालन से बाहर रखे गए दिनों को मुख्य रूप से निर्धारित अवधि में जोड़ा जाना चाहिए; कहने का मतलब यह है कि यदि निर्धारित अवधि 3 वर्ष है और 20 दिनों को यह निर्धारित करने के लिए बाहर रखा जाना है कि निर्धारित अवधि कब समाप्त होती है, तो 20 दिनों को 3 वर्षों में जोड़ा जाना चाहिए, और इस प्रकार निर्धारित अवधि की समाप्ति की तारीख का पता लगाया जाता है।"

---

[1] ए.आई.आर. 1947 लाहौर 168.
[2] ए.आई.आर. 1942 मद्रास 604
[3] ए.आई.आर. 1960 मैसूर 216
[4] ए.आई.आर. 1961 उड़ीसा 133
[5] ए.आई.आर. 1959 इलाहाबाद 699
[6] ए.आई.आर. 1935 पी.सी. 85.

7) इन टिप्पणियों से यह स्पष्ट होता है कि जबकि अधिनियम की धारा 4 एक अपीलकर्ता को न्यायालय के शुरुआती दिन अपील दायर करने की अनुमति देती है, हालांकि जिस समय के भीतर अपील दायर की जा सकती है वह समाप्त हो गई है जब न्यायालय बंद हो गया था, धारा काम नहीं करती है ताकि सीमा की निर्धारित अवधि को बढ़ाया जा सके। यह उल्लेखनीय है कि लॉर्ड टॉमलिन ने उस समय के बारे में कोई टिप्पणी नहीं की जब फैसले की प्रति प्राप्त करने के लिए एक आवेदन किया जाना चाहिए या उन परिस्थितियों के बारे में जिसमें इस तरह के फैसले की प्रति प्राप्त करने में बिताया गया समय अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) द्वारा विचार किए गए "समय-आवश्यकता" होगा। हालांकि, जो विशेष रूप से निर्धारित किया गया था वह यह था कि "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने का सही तरीका वही है जो हमारे द्वारा ऊपर बताया गया है, अर्थात्, अनुसूची में दी गई सीमा की अवधि के लिए। ई ने किसी अन्य अवधि को जोड़ा जो अधिनियम के भाग III के तहत बहिष्करण के लिए उत्तरदायी है। गणना की यह विधि *भिवानी क्लॉथ मिल के मामले*(1) में सही ढंग से लागू की गई थी, जिसके तथ्यों को बताया जा सकता है। वादी-प्रतिवादियों का मुकदमा 31 जुलाई, 1940 को ट्रायल कोर्ट में खारिज कर दिया गया था। उसी दिन उन्होंने निर्णय की एक प्रति के लिए आवेदन किया जो 7 अगस्त, 1940 को पूरा हो गया और उन्हें सौंप दिया गया। तथापि, उन्होंने 30 सितम्बर, 1940 तक और कुछ नहीं किया, जब उन्होंने डिक्री-पत्र की एक प्रति के लिए न्यायालय में आवेदन किया जो 11 अक्तूबर, 1940 को पूरा हो गया और उन्हें सौंप दिया गया, जिस तारीख को उन्होंने निचली अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपनी अपील दायर की। न्यायालय का वार्षिक अवकाश, यह ध्यान दिया जा सकता है, 1 सितंबर, 1940 को शुरू हुआ, और 30 सितंबर, 1940 तक जारी रहा, ताकि न्यायालय 1 अक्टूबर, 1940 को फिर से खुल जाए। *मगबुल अहमद* के मामले में निर्धारित विधि को "निर्धारित अवधि" पर पहुंचने के लिए लागू करते हुए, मुख्यन्यायमूर्ति हैरिस ने डिवीजन बेंच के प्रमुख फैसले को सुनाया, और कहा:

"मैंने जो अवलोकन उद्धृत किए हैं, वे यह भी दिखाते हैं कि सीमा की अवधि की गणना करने में उचित तरीका यह है कि मुख्य रूप से निर्धारित अवधि को लिया जाए और फिर इसमें उन अवधियों को जोड़ा जाए जिन्हें धारा 12 या 14 या इस तरह के कारणों से बाहर रखा गया है। वर्तमान मामले में, मुख्य रूप से, निर्धारित अवधि तीस दिन थी। फैसले की प्रति प्राप्त करने के लिए सात दिनों को बाहर रखा गया था और डिक्री शीट की प्रति प्राप्त करने के लिए बारह दिनों को बाहर रखा गया है। इन दो अवधियों को 30 दिनों की निर्धारित अवधि में जोड़ा जाना चाहिए और यह 49 दिनों की अवधि बनाता है। निर्णय की तारीख से 49 दिनों की गणना, अर्थात् 31 जुलाई, 1940, जो हमें 18 सितंबर को लाता है। उस दिन, सीमा की अवधि समाप्त हो गई; लेकिन चूंकि न्यायालय बंद हो गया था, अपीलकर्ता परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के कारण 1 अक्टूबर को अदालत के फिर से खुलने के दिन अपनी अपील दायर करने का हकदार था। हालांकि, फैसले से यह स्पष्ट है कि *मकबुल अहमद का मामला* (6) कि धारा 4, परिसीमा अधिनियम, इस प्रकार अपील दायर करने का समय 18 सितंबर से 1 अक्टूबर तक नहीं बढ़ाता है।

8) पूरे सम्मान के साथ, हम कहेंगे कि ये अवलोकन अपवाद नहीं हैं। लेकिन इसके संबंध में एक बात ध्यान में रखनी होगी। इस मामले में अपीलकर्ता ने यह मांग की थी कि अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के कारण परिसीमा की अवधि को 18 सितंबर, 1940 से 1 अक्टूबर, 1940 तक बढ़ाया जाए। उनकी ओर से आग्रह किया गया था कि चूंकि अपील 1 अक्टूबर 1940 तक किसी भी समय

दायर की जा सकती है। बी । अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के कारण, आक्षेपित निर्णय की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन तब तक किसी भी समय किया जा सकता है और ऐसी प्रति प्राप्त करने में लगने वाली अवधि को बाहर रखना होगा। इस विवाद को खारिज करते हुए हैरीज़ सी.जे. ने कहा:

"ऐसा इसलिए होगा, अगर परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के प्रभाव से परिसीमा की अवधि का विस्तार किया जाना था, लेकिन यदि परिसीमा की अवधि पहले ही समाप्त हो गई थी, तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतियां नहीं मांगी जा सकती हैं, और किसी भी स्थिति में, ऐसी प्रति प्राप्त करने में बिताए गए समय को ध्यान में नहीं रखा जा सकता है, क्योंकि समय पहले ही समाप्त हो चुका था। यह आग्रह किया जाता है कि चूंकि अपील 1 अक्टूबर को दायर की जा सकती है, इसलिए अपील दायर करने का अधिकार 30 सितंबर को मौजूद था और इसने अपीलकर्ता को डिक्री शीट की प्रतियों के लिए आवेदन करने और सीमा की वास्तविक अवधि की गणना करने के उद्देश्य से ऐसी प्रतियां प्राप्त करने में लगने वाले समय को बाहर करने का अधिकार दिया। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यदि यह माना जाता है कि यह अपील 11 अक्टूबर, 1940 को समय के भीतर दायर की गई थी, तो हम यह मानने के लिए बाध्य हैं कि परिसीमा की अवधि वास्तव में परिसीमा अधिनियम की धारा 4 के कारण बढ़ाई गई थी, और यह कहना कि यह न्यायमूर्ति के सटीक निर्णय *मकबुल अहमद का मामला* (6) के विपरीत होगा। "

9) इन टिप्पणियों का अर्थ यह निकाला जाना चाहिए कि जब कोई अपील "निर्धारित अवधि" के बाद दायर की जाती है, अर्थात, अनुसूची में दी गई सीमा की अवधि, जिसे अधिनियम के भाग III के तहत बहिष्करण के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है, तो अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों का सहारा नहीं लिया जा सकता है। बंद था। हमारी राय में, उनका मतलब यह नहीं है कि भले ही अपील "निर्धारित अवधि" के भीतर दायर की जाती है, लेकिन यह समय-निषिद्ध होगा यदि आक्षेपित निर्णय की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन उस दिन किया जाता है जब अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी है। अधिनियम में कोई प्रावधान यह नहीं कहता है कि प्रति प्राप्त करने में लगने वाले समय से पहले ऐसा आवेदन कब किया जाना चाहिए, इसे अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) के अर्थ के भीतर "समय की आवश्यकता" माना जाएगा और न ही कानून के किसी सिद्धांत को हमारे ध्यान में लाया गया है जैसे कि उस उप-धारा के तहत अपीलकर्ता को दिए गए समय के बहिष्करण के संबंध में अधिकार को नकारात्मक करेगा। विचाराधीन प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन एक विशेष समय पर किया जाता है। *मुरलीधर श्रीनिवास* बनाम *मोती लाल रामकूमर*[7],मामले में बंबई उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने भी यही विचार व्यक्त किया था, जिसके तथ्य भी बताए जा सकते हैं। निर्णय 6 मार्च, 1936 को दिया गया था और उसी दिन अपीलकर्ता ने इसकी एक प्रति के लिए आवेदन किया था जिसे 19 मार्च, 1936 को उनके वकीलों को सौंप दिया गया था। 9 अप्रैल, 1936 को, अपीलकर्ता ने डिक्री की एक प्रति के लिए आवेदन किया। डिक्री को 20 अप्रैल, 1936 को सील कर दिया गया था, लेकिन अपीलकर्ता और प्रतिवादियों के वकीलों द्वारा अनुमोदित मसौदा पहली बार 24 मार्च, 1936 को प्रोथोनोटरी को प्रस्तुत किया गया था। अपील स्वयं 23 अप्रैल, 1936 को दायर की गई थी। एक प्रारंभिक आपत्ति यह ली गई थी कि अपील समय से बाहर थी क्योंकि यह डिक्री की तारीख के 20 दिनों से अधिक समय बाद दायर की गई थी और अपील की गई डिक्री की प्रति

[7] ए.आई.आर 1937 बॉम्बे 162.

प्राप्त करने के लिए समय के विस्तार की अनुमति नहीं दी जा सकती थी क्योंकि 20 दिनों के भीतर ऐसी कोई प्रति लागू नहीं की गई थी। ब्यूमोंट, सीजे, जिन्होंने मामले में मुख्य निर्णय दिया, ने कहा:

"मेरी राय में धारा की भाषा में अपीलकर्ता को प्रदान किए गए अधिकारों पर इस तरह की सीमा लगाने का कोई औचित्य नहीं है। इस न्यायालय के निर्णय वास्तव में धारा 12 में एक प्रावधान जोड़ने के समान हैं कि अधिनियम, 151 द्वारा अपील के लिए सीमित समय से पहले डिक्री की प्रति के लिए आवेदन किया गया है और धारा में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है।

* * * *

* * * *

मैं इस सिद्धांत का विरोध करता हूं कि न्यायालय अपीलकर्ता के वैधानिक अधिकार पर एक प्रतिबंध लगा सकता है जो अधिनियम द्वारा आवश्यक नहीं है। मैं इसमें कोई संदेह नहीं करता कि एक नियम जिसमें यह प्रावधान है कि डिक्री की प्रति प्राप्त करने के लिए कोई समय नहीं दिया जाएगा जब तक कि डिक्री की तारीख से 20 दिनों के भीतर ऐसी प्रति प्राप्त करने हेतु आवेदन ना दे, अल्ट्रा वारेस होगा।"

यह आगे ब्यूमोंट मुख्यन्यायमूर्ति द्वारा निर्णीत किया गया था कि:

"मेरी राय में इस न्यायालय के फैसलों द्वारा धारा 12 के तहत अपीलकर्ता के अधिकारों पर लगाई गई सीमा का कोई औचित्य नहीं है। मुझे लगता है कि वे निर्णय प्रिवी काउंसिल के निर्णयों के साथ असंगत हैं। *जिजीभोय एन. सुरती* बनाम *टी. एस. चेट्टयार फर्म*[8], कि धारा 12 अपीलकर्ता को निर्दिष्ट समय के बहिष्करण का एक महत्वपूर्ण अधिकार प्रदान करती है।

10) अत्यंत सम्मान के साथ हम इन टिप्पणियों से पूरी तरह सहमत हैं, जैसा कि वे भारत में सर्वोच्च न्यायिक न्यायाधिकरण के नवीनतम फैसले के अनुरूप हैं। *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *महाराजा नारायण और अन्य*[9] में अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) की व्याख्या करते समय उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति ने यही निर्धारित किया है /:

"यह याद रखा जाना चाहिए कि धारा 12 की उप-धारा (2) अनुसूची 1 की प्रविष्टि 157 के तहत निर्धारित सीमा की अवधि को बढ़ाती है। यह धारा अपीलकर्ता को अपील दायर करने में लगने वाले समय, अपील किए गए आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समय में से कटौती करने की अनुमति देती है, न कि किसी अन्य तारीख को प्रति के लिए आवेदन दायर किए जाने पर किसी भी कम अवधि में कटौती करने की अनुमति देती है। धारा 12(2) को पढ़ने से पता चलता है कि अपील के लिए निर्धारित सीमा की अवधि की गणना करते समय, जिस दिन निर्णय या आदेश की शिकायत की गई थी, उस दिन अदालत द्वारा आवेदन की गई प्रति उपलब्ध कराने में लगने वाले समय को बाहर रखा जाना चाहिए। उस प्रावधान के दायरे को सीमित करने का कोई औचित्य नहीं है।

11) मद्रास, मैसूर, उड़ीसा और इलाहाबाद प्राधिकरणों में ऊपर उल्लिखित तथ्य लाहौर मामले के समान थे और उनमें से प्रत्येक में संबंधित अपीलकर्ता द्वारा परिसीमा की अवधि को अधिनियम की धारा 4 का सहारा लेते हुए विस्तारित करने की मांग की गई थी, अनुसूची में

---

[8] 55 आई.ए. 161

[9] ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 960

दी गई सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद लगाए गए आक्षेपित निर्णय या डिक्री की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन किया गया था। अपीलकर्ता द्वारा उनमें से प्रत्येक में इस तरह के विस्तार की मांग करने का कारण यह था कि यदि निर्धारित अवधि की गणना अधिनियम की अनुसूची के प्रावधानों और उसकी धारा 12 के अनुसार की गई थी, तो लाहौर मामले की तरह अपील समयबद्ध थी। ऐसे तथ्यों के आधार पर इन प्राधिकारियों ने निर्धारित किया कि अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद किए गए आवेदन के अनुसरण में आक्षेपित निर्णय की प्रति प्राप्त करने में बिताए गए समय को अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) के प्रावधानों के तहत बाहर नहीं रखा जा सकता है। हम पहले ही अपना विचार व्यक्त कर चुके हैं कि इन मामलों में इस मुद्दे पर की गई टिप्पणियों को उन विशेष तथ्यों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए जिन पर विचार किया गया है। फिर भी, हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि यदि उन टिप्पणियों का अर्थ यह था कि अनुसूची में निर्धारित सीमा की अवधि की समाप्ति के बाद किए गए किसी भी आवेदन के मामले में धारा 12 की उप-धारा (2) लागू नहीं होगी, तो हम उनका समर्थन नहीं कर सकते हैं और यह मानते हैं कि अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) की सही व्याख्या बॉम्बे प्राधिकरण में उल्लिखित है। ऊपर।

12) हम यहां यह भी स्पष्ट कर सकते हैं कि "निर्धारित अवधि" के भीतर अपनी अपील लाने के उद्देश्य से याचिकाकर्ता अब अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों की सहायता नहीं लेते हैं। उनकी ओर से केवल यह तर्क दिया गया है कि अनुसूची में दी गई परिसीमा की अवधि की गणना अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (2) के प्रावधानों के अनुसार की जानी चाहिए, उस समय के संदर्भ के बिना जब दिवाला न्यायाधीश के आदेश की प्रति प्राप्त करने के लिए आवेदन किया गया था। *मकबूल अहमद के मामले* (6) में निर्धारित गणना की विधि और ऊपर उल्लिखित बॉम्बे प्राधिकरण में उक्ति को ध्यान में रखते हुए इस तर्क को स्वीकार किया जाना चाहिए। तदनुसार, याचिकाकर्ताओं द्वारा रोहतक में जिला न्यायालय में वरीयता दी गई अपील को समय के भीतर आयोजित किया जाना चाहिए।

13) परिणाम में, याचिका को स्वीकार किया जाता है और याचिकाकर्ताओं द्वारा रोहतक में जिला न्यायालय में प्रस्तुत अपील को खारिज करने के आदेश को रद्द कर दिया जाता है। उस न्यायालय को गुण-दोष के आधार पर अपील की सुनवाई करने और निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है। पक्षकारों को 15 दिसम्बर, 1969 को उस न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है। हमारे समक्ष कार्यवाही की लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

न्यायमूर्ति डी. के. महाजन - मैं सहमत हूं।

एन.के.एस.

अस्वीकरण : *स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।*

परीक्षित

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

महम, रोहतक,हरियाणा।